DSSSB TGT & PGT

Part-B

SCHOLAR BATCH

संस्कृत

समास

Part -2

LIVE 16-07-2024 05:00 PM

समास

1) विशेषसंज्ञाविनिर्मुक्तः केवलसमासः प्रथमः जब समास तो किया जाता है परन्तु उसकी शास्त्र में अव्ययीभाव, तत्पुरुष आदि की तरह कोई विशेष संज्ञा नहीं की गई होती तो उसे केवलसमास ही कहा जाता है। यह समास "सह सुपा" सूत्र से या इसके योग विभाग द्वारा ही सम्पन्न होता है। यथा पूर्व भूतः भूतपूर्वः।

2) प्रायेण पूर्वपदार्थप्रधानः अव्ययीभावः द्वितीयः - अव्ययीभाव एक अन्वर्थ अर्थात् अर्थानुसारी संज्ञा है। इस समास में प्रायः पूर्वपद अव्यय होता है और उत्तरपद अनव्यय, परन्तु समास होने पर समस्त पद अव्यय बन जाता है। अनव्ययम् अव्ययं भवति - अव्ययीभावः। अव्ययीभावसमास में प्रायः पूर्वपद के अर्थ की प्रधानता होती है।

3) प्रायेण उत्तरपदार्थ प्रधानः तत्पुरुषसमासः तृतीयः। तत्पुरुषभेदः कर्मधारयः। कर्मधारयभेदो द्विगुः। 'तत्पुरुषः सूत्र के अधिकार में विहित समास 'तत्पुरुष' कहा जाता है। द्वितीया विभक्त्यन्त से लेकर सप्तमी विभक्त्यन्त तक जिस जिस विभक्त्यन्त का उत्तरपद के साथ समास का विधान किया जाता है वह तत्पुरुषसमास उसी विभक्ति के नाम से व्यवहृत होता है।

4) प्रायेण अन्यपदार्थ प्रधानः बहुव्रीहिः चतुर्थः। बहुव्रीहिः समास शेषो बहुव्रीहिः (965) के अधिकार में जिस समास का विधान किया जाता है उसे बहुव्रीहिसमास कहते हैं। इस समास में समस्यमान पदों से भिन्न तत्सम्बद्ध किसी अन्य पद के अर्थ की ही प्रायः प्रधानता होती है। यथा पीतम् अम्बरं यस्य स पीताम्बरः (पीले कपड़े हैं जिस के वह, अर्थात् श्रीकृष्ण आदि)। यहां पीत और अम्बर पदों से भिन्न अन्य पद के अर्थ की प्रधानता है। समस्यमान पद उस अन्य पद के केवल विशेषण बन कर रह गये हैं।

5) प्रायेण उभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः पञ्चमः। 'च' के अर्थ (समाहार तथा इतरेतरयोग) में "चार्थे द्वन्द्वः सूत्र द्वारा द्वन्द्व समास का विधान किया जाता है। द्वन्द्व समास में दोनों (या दो से अधिक सब) पदों के अर्थों की प्रायः प्रधानता होती है। यथा हरिश्च हरश्च हरिहरौ। यहां दोनों पदों के अर्थों का प्राधान्य होने से क्रिया में दोनों का ही अन्वय होता है।

9.3 समास - "समर्थः पदविधिः" सूत्र से "झयः" सूत्र पर्यन्त

प्रिय छात्रों अब आप यहाँ 'समर्थः पदविधिः सूत्र से लेकर "झयः" सूत्र पर्यन्त आने वालों सूत्रों का अध्ययन क्रमशः करेंगें। जैसा कि प्रस्तावना में हमने आपको बताया कि जो समसनं या संक्षेपीकरण अर्थात् दो या दो से अधिक पदों को मिलाकर एकपद बना देना समास वृत्ति कहलाता है (वृत्ति स्वरूप तथा उसके भेदों का विवेचन आगे इसी पाठ में किया जाएगा)।

वर्णविचार → संधि

पदविचार → समास

वाक्यविचार → कारक

वृत्ति जो है वह पदसम्बन्धी विधि है और वह समर्थाश्रित होती है। तो पदसम्बन्धी विधि समर्थाश्रित होती है यह बताने वाले सूत्र का विवेचन आपके समक्ष प्रस्तुत करते हैं-

सूत्र - समर्थः पदविधिः 2.1.1

सूत्रवृत्ति - पदसम्बन्धी यो विधिः स समर्थाश्रितो बोध्यः ।

सूत्रानुवाद - पदविधि अर्थात् पदसम्बन्धी कार्य (पदों से सम्बन्ध रखने वाला कार्य) समर्थ पदों के आश्रित होता है।

व्याख्या - समर्थः, पदविधिः यह पदच्छेद है। यह द्विपदात्मक सूत्र है। विधीयते इति विधिः = कार्यम्। विपूर्वक डुधाञ् धारण-पोषणयोः धातु से कर्म में उपसर्गे घोः किः सूत्रद्वारा 'कि' (इ) प्रत्यय कर आकार का लोप करने पर 'विधि' शब्द निष्पन्न होता है।

विधान किये गये कार्य को विधि कहते हैं। पदानां विधिः पद विधिः, यहाँ सम्बन्धषष्ठीतत्पुरुषसमासः। 'समर्थः पद यहाँ 'समर्थाश्रितः' के अर्थ में लाक्षणिक है। पदविधिः पदों से संबन्ध रखने वाला कार्य (समर्थः) समर्थ पदों के आश्रित होता है। यह एक परिभाषासूत्र है।

अतः प्रस्तुत परिभाषा के कारण सम्पूर्ण अष्टाध्यायी में जहां-कहीं पदसम्बन्धी कार्य कहा जायेगा वह कार्य समर्थ पदों के आश्रय पर ही होगा असमर्थ पदों के नहीं। आकाङ्क्षा आदि के वशात् परस्पर सम्बद्धार्थ होना ही पदों का सामर्थ्य है।

समास पदसम्बन्धी विधि (कार्य) है क्योंकि इस में एक सुबन्त का दूसरे सुबन्त के साथ योजन होता है अतः प्रकृत परिभाषा द्वारा यह समास समर्थ पदों के आश्रित होगा। जैसे राज्ञः पुरुषः - राजपुरुषः (राजा का सेवक)।

यहां दोनों पद समर्थ हैं, स्वस्वामिभावसम्बन्ध से परस्पर सम्बद्ध हैं अतः यहां समास हो कर 'राजपुरुषः' ऐसा समस्त रूप बन जाता है। परन्तु 'भार्या राज्ञः पुरुषो देवदत्तस्य' (स्त्री राजा की है, पुरुष देवदत्त का है) यहां 'राज्ञः' और 'पुरुषः' का समास नहीं होता, कारण कि ये दोनों पद परस्पर निरपेक्ष होने से असमर्थ हैं। राज्ञः का सम्बन्ध भार्या के साथ है, न कि पुरुषः के साथ, एवं पुरुषः का देवदत्तस्य के साथ है न कि राज्ञः के साथ। इसी प्रकार पश्यति कृष्णं श्रितो देवदत्तो गुरुकुलम् यहां पर कृष्णं श्रित में समास नहीं होता।

'वस्त्रम् उपगोः अपत्यं देवदत्तस्य' यहाँ उपगोरपत्यम् में 'तस्याऽपत्यम" द्वारा तद्धित अण प्रत्यय न होने से 'औपगवः' नहीं बनता। यहाँ ध्यातव्य है कि तद्धित की उत्पत्ति भी प्रायः सुबन्त से ही होती है अतः तद्धितविधि भी पदविधि ही है।

- जैसा कि हमने आपको बताया था कि समर्थ पद समर्थाश्रित में लाक्षणिक है उसके अनुसार जिनमें सामर्थ्य हो उनमें ही पदविधि होती है। तो वह सामर्थ्य भी दो प्रकार का होता है व्यपेक्षाभावसामर्थ्य और एकार्थीभावसामर्थ्य।

वाक्य में व्यपेक्षाभाव सामर्थय होता है क्योंकि इस में पद परस्पर अपेक्षा रखा करते हैं। परन्तु समास में एकार्थीभाव (सभी पदों का मिल कर एक अर्थ को कहना) रूप सामर्थ्य होता है।

सूत्र - प्राक्कडारात् समासः 2.1.3

सूत्रवृत्ति - "कडाराः कर्मधारये" इत्यतः प्राक् समास इत्यधिक्रियते ।

सूत्रानुवाद - "कडाराः कर्मधारये इस सूत्र से पहले समास का अधिकार होता है।

व्याख्या - प्राक्, कडारात्, समासः यह पदच्छेद है। यह त्रिपदात्मक सूत्र एक अधिकार सूत्र है। प्राक् यह एक अव्यय पद है। कडारात् पञ्चमी का एकवचन तथा सूत्र की अवधि को दर्शाता है। समासः यह प्रथमान्त है। इस सूत्र का अधिकार "कडाराः कर्मधारये" सूत्र से पूर्व तक होता है। 'कडार शब्द से 'कडाराः कर्मधारये" सूत्र के आद्य अंश का अनुकरण किया गया है।

तो इस प्रकार सूत्रार्थ होता है कडारात् = कडाराः कर्मधारये सूत्र से प्राक् पूर्व समासः समास अधिकृत किया जाता है। तात्पर्य यह है कि अष्टाध्यायी में इस प्रस्तुत सूत्र से ले कर "कडाराः कर्मधारये सूत्र के पूर्व तक समास का विधान किया जायेगा।

एक बिन्दु पर ध्यान देना आवश्यक है कि प्रकृत सूत्र में 'प्राक्' पद की आवृत्ति कर ली जाती है जिसके फलस्वरूप कडाराः कर्मधारये सूत्र से प्राक् (पूर्व) समास संज्ञा करने पर भी किए जा रहे विधान में अव्ययीभावतत्पुरुषादि अन्य संज्ञा का समावेश भी हो जाएगा। जिससे कडाराः कर्मधारये से पूर्व समास सामान्य संज्ञा को प्राप्त होता हुआ।

सूत्र - सह सुपा 2.1.4

सूत्रवृत्ति - सुप् सुपा सह वा समस्यते। समासत्वात् प्रातिपदिकन्वेन सुपो लुक्।

सूत्रानुवाद - सुबन्त का सुबन्त के साथ समास होता है।

व्याख्या - सुप्, सुपा, यह पदच्छेद है। यह द्विपदात्मक सूत्र समास विधायक सूत्र है। इसमें "सुबान्मन्त्रिते पराङ्गवत्स्वरे सूत्र से सुप् पद की तथा "प्राक्कडारात् समासः" सूत्र से समास पद की अनुवृत्ति की जाती है। सुप् जो कि एकवचनान्त है, से सुबन्त का ग्रहण किया जाता है। यह ग्रहण 'प्रत्ययग्रहणे तदन्ता ग्राह्याः' इस परिभाषा से होता है क्योंकि सुप् प्रत्यय का स्वरूप है।

जहाँ प्रत्यय का ग्रहण किया हो वहाँ प्रत्ययान्त का ग्रहण किया जाए ऐसा परिभाषार्थ है। इसी प्रकार सुपा जो कि तृतीयान्त है, से सुबन्तेन ऐसा अर्थ होगा। तो इस प्रकार से पूर्ण सूत्रार्थ फलित होगा सुबन्त का सुबन्त के साथ समास होता है। जैसे सुबन्त 'राज्ञः' का सुबन्त 'पुरुष' के साथ समास होने पर राजपुरुष बनता है।

तो यहाँ जो राजन् शब्द का षष्ठ्यन्त राज्ञः है इसकी षष्ठी कहाँ कैसे लुप्त हुई इस जिज्ञासा के शमन के लिए ग्रन्थकार ने लिखा समासत्वात् प्रातिपदिकेन सुपो लुक्।

इसका अर्थ यह है कि समास संज्ञा होने पर समास की कृत्तद्धितसमासाश्च इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर "सुपो धातुप्रातिपदिकयोः सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् होता है। यह पाठ के अन्त में रूप साधन प्रकिया में और अधिक स्पष्ट हो जाएगा।

वृत्ति का स्वरूप - परार्थाभिधानं वृत्तिः । परार्थ दूसरे अर्थ का, अभिधान = कहना (बोध कराना), ही वृत्ति है अर्थात् परार्थ के बोधन कराने को 'वृत्ति' कहा जाता है।

प्रत्यय अथवा अन्य पद को साथ लेकर जो विशिष्ट अर्थ प्रतीत हुआ करता है, उसे 'परार्थ' कहते है। वृत्ति से इसी 'परार्थ' का बोध हुआ करता है।

वृत्ति के भेद - कृत्तद्धितसमासैकशेषसनाद्यन्तधातुरूपाः पञ्चवृत्तयः।
अर्थात् कृत्, तद्धित, समास, एकशेष तथा सनाद्यन्तधातुरूप ये पाँच वृत्तियाँ होती हैं। 'कृत्' से तात्पर्य कृत् प्रत्यय है जिनका विवेचन 'कृदन्त' प्रकरण में किया गया हैं। तद्धित से तात्पर्य तद्धित प्रत्यय है जिनका विवेचन तद्धित प्रकरणों में किया गया है।

'समास' तथा 'एकशेष' वर्तमान प्रसङ्ग में आपके पाठ्यांशमें यहाँ बतलाये ही जा रहे हैं तथा सनाद्यन्त धातुरूप वृत्ति से तात्पर्य ण्यन्त, सन्नन्त, नामधातु आदि प्रक्रियाओं से है जिनका विवेचन उन उन सम्बन्धित प्रकरणों में किया गया है। इस वृत्ति के कार्य हैं सन, क्यच्, काम्यच् आदि प्रत्यय।

विग्रहवाक्य की परिभाषा व भेद वृत्त्यर्थावबोधकं वाक्यं विग्रहः। वृत्ति के अर्थ का ज्ञान कराने वाले वाक्य को 'विग्रह' कहा जाता है। जैसे राजपुरुषः यह समासवृत्ति है।

इसके अर्थ की प्रतीति 'राज्ञः पुरुषः' इस वाक्य द्वारा होती है। अतः इसी का नाम विग्रह है। स च लौकिकोऽलौकिकश्चेति द्विधा। वह लौकिक और अलौकिक भेद से दो प्रकार का है।

(1) लौकिक विग्रह जिसका लोक में प्रयोग किया जाता है उसे लौकिक कहा जाता है। जैसे राजपुरुषः का राज्ञः पुरुषः यह लौकिक विग्रह है।

(2) अलौकिक विग्रह जिसका लोक में प्रयोग नहीं होता उसे अलौकिक विग्रह कहा जाता है। जैसे- राजपुरुष का 'राजन्, ङस्, पुरुष सु' यह अलौकिक विग्रह है।

उदाहरण - भूतपूर्वः - "पूर्वं भूतः" इस लौकिक एवं "पूर्व अम् भूत सु" इस अलौकिक विग्रह में "सुप् सुपा" सूत्र से सुबन्त 'पूर्व' का 'भूतः' इस सुबन्त के साथ समास हो जाने पर "कृत्तद्धितसमासाश्च" सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा हो जाने पर "सुपो धातुप्रातिपदिकयोः" सूत्र से सुप् विभक्ति 'अम्' और 'सु' का लोप होकर 'पूर्व भूत' रूप बन जाने पर "भूतपूर्वे चरट् इस सूत्र के निर्देश से 'भूत' शब्द के पूर्व निपात हो जाने पर 'भूतपूर्व' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु प्रत्यय करने पर भूतपूर्वः रूप बनता है।

वार्तिक - इवेन समासो विभक्त्यलोपश्च । (वार्तिक)

वृत्ति - सुप् इवेन सह समस्यते समासावयव-विभक्तेरलोपश्च भवति ।

अनुवाद - सुबन्त का इव अव्यय के साथ समास होता है, परन्तु समासावयव विभक्ति का लोप नहीं होता।

वागर्थौ + इव

वागर्थ + औ + इव : वागर्थाविव

व्याख्या - इवेन, समासः, विभक्त्यलोपः, च यह पदच्छेद है। इस प्रकार चतुष्पदात्मक वार्तिक है। इस वार्तिक में भी "सुबामन्त्रिते पराङ्गवत्स्वरे सूत्र से सुप् की पूर्ववत् अनुवृत्ति होती है। तो इसका अर्थ होता है इव इस अव्यय पद के साथ 'सुबन्त' का समास होता है और विभक्ति का लोप नहीं होता है।

उदाहरण – वागर्थाविव - वागर्थौ इव इस लौकिक विग्रह एवं वागर्थ औ इव इस अलौकिक विग्रह में प्रकृत वार्तिक से 'इव' के साथ वागर्थौ इस सुबन्त का समास होने पर "कृत्तद्धितसमासाश्च" से समास की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर "सुपो धातुप्रातिपदिकयोः" से विभक्ति का लोप प्राप्त होता है उसका इसी वार्तिकांश 'विभक्त्यलोपश्च' से निषेध करने पर वागर्थौ+इव स्थिति में औ के स्थान पर 'आव्' आदेश होकर 'वागर्थ आव इव' = 'वागर्थाविव' सिद्ध होता है।

1-स च विशेषसंज्ञाविनिर्मुक्तः.......... पूरयत-

1-अव्ययीभावः

2-केवलसमासः

3-प्रथमः

4-द्वितीयः

क-1+3 ख-1+4 ग-2+3 घ-2+4

2- प्रायेण पूर्वपदार्थप्रधानः कथ्यते-

उपकृष्णम्

गङ्गात्रि

1-केवलसमासः

2-अव्ययीभावः

3-तत्पुरुषः

4-कर्मधारयः

उपकृष्णम्

3-क्रमेण योजयत-

1-केवलसमासः

2-अव्ययीभावः

3-तत्पुरुषः

4-बहुव्रीहिः

5-द्वन्द्वः

क-1+2+3+4+5

ख-1+3+2+4+5

ग-2+3+4+5+1

घ-1+4+2+3+5

4- समर्थः पदविधिः इत्यस्य उचित व्याख्या वर्तते-

1- वाक्यसंबन्धी यो विधिः स समर्थाश्रितो बोध्यः

2- समाससंबधी यो विधिःस समर्थाश्रितो बोध्यः

3-व्यकारणसंबधी यो विधिःस समर्थाश्रितो बोध्यः

4-पदसंबन्धी यो विधिः स समर्थाश्रितो बोध्यः